IJFANS INTERNATIONAL JOURNAL OF FOOD AND NUTRITIONAL SCIENCES
ISSN PRINT 2319 1775 Online 2320 7876
Research Paper © 2012 IJFANS. All Rights Reserved UGC CARE Listed (Group -I) Journal Volume 11, Iss 01, 2022

हिन्दू धर्म और बौद्ध धर्म : आनंद के कुमारस्वामी

डॉ कृष्ण चंद पांडेय
सहायक आचार्य
भदंत आनंद कौसल्यायन बौद्ध अध्ययन केंद्र
महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय।

ज्ञान और विवेक मानवीय चेतना के गुण हैं और मूल्य इस चेतना का एषणीय अथवा लक्ष्यभूत अर्थ है। सामान्यतया अर्थ के हेय और उपादाय दो रूप होते हैं। इनका ही प्रतीयमान अथवा प्रेयस अथवा वास्तविक अथवा श्रेयस रूप में प्रविभाग होता है। ज्ञान अथवा विवेक से संकल्प द्वारा वरेण्य श्रेयस को मूल्य की आख्या दी जा सकती है। दूसरे शब्दों में चेतना की श्रेय पर्येषणा मूल्यानुसंधान है।

चेतना की पर्येषणा विषय और विषयी रूप में द्विविध होती है। विषय पर्येषणा मूलतः दुःखरूप अतएव हेय तथा त्याज्य होती है। इसलिए स्वाभाविक रूप से चेतना की विषयी पर्येषणा उसका सही एवं उपादेय पर्येषणा हो जाता है। वस्तुतः मानसिक विकल्पों में अथवा उसके विषय में खोये बिना अपने को खोजना, अनुभव प्रवाह में आभासित आत्मिक चेतना का अनुसंधान अथवा पर्येषणा वास्तविक पर्येषणा है। इसी आर्य पर्येषणा को श्रेयस अथवा मूल्यानुसंधान कहा जा सकता है।

यह आर्य पर्येषणा अथवा मूल्यानुसंधान भारतीय धार्मिक चिंतन का प्राणभूत अंग है। ऋग्वेद के प्रसिद्ध गायत्री मंत्र के 'तत्सवितुर्वरेण्यं' में यही श्रेयस अथवा मूल्य वरेण्य रूप में प्रार्थित है। कठोपनिषद की प्राचीन कथा में, नचिकेता और यम के संवाद में प्रेयस और श्रेयस का यही मूल्यगत द्वंद्व अत्यंत सूक्ष्मता से अपनी सांकेतिकता के साथ उपस्थित है। आत्मा का जिज्ञासु नचिकेता मृत्यु से उसका रहस्य जानने को उत्कंठित है। वह जानता है कि मृत्यु सनातन प्रवाही स्वभाव है, धर्म है, पर यही अमृतत्व का द्वार भी है। मृत्यु के देवता बड़ी चतुराई से उसे प्रलोभनों में फँसाते हैं और मृत्यु के अतिक्रामी सत्य के बारे में न पूछने को कहते हैं—

देवैरत्रापि विचिकित्सितं पुरा
न हि सुविज्ञेयमणुरेष धर्मः।
अन्यं, वरं नचिकेतो वृणीष्व
मा मोपरोत्सीरति मा सृजैनम।
शतायुषः पुत्रपौत्रान वृणीष्व
बहून पशून हस्तिहिरण्यमशवाना
भूमेर्महदायतनं वृणीष्व

स्वयं च जीव शरदो यावदिच्छसि
एतत्ततुल्यं यदि मन्यसे वरं
वृणीष्व: वित्तं चिरजीविकां च।
महाभूमौ नचिकेतस्त्वमेधि
कामानं त्वा कामभाजंकरोमि ।

परंतु श्रेयोभिप्सित नचिकेता कहता है—

श्वोभावा मर्त्यस्य यदंतकैतत
सर्वेंद्रीययाणां जरयंति तेज:।
अपि सर्वं जीवितमल्पमेव
तवैव वाहास्तव नृत्यगीते।

इस मूल्यगत द्वंद्व की निष्पत्ति होती है -

श्रेयश्च प्रेयश्च मनुष्यमेत
स्तौ सम्परीत्य विविनक्तिधीर:।
श्रेयो हि धोरोअभि प्रेयसोवृणीते
प्रेयो मंदो योगक्षेमादवृणीते।।

एक प्राचीन संदर्भ है कि संबोधि के पश्चात् वाराणसी से ऊरवेला जाते हुए भगवान बुद्ध को रास्ते में तीस अति उद्विग्न युवक मिले। वन विहार को आए हुए उन युवकों के साथ एक वेश्या भी थी जो कि उन लोगों के नशे में होने पर उनके आभूषण लेकर चंपत हो गई। उसी को खोजते हुए वे युवक भगवान बुद्ध से पूछताछ करने लगे। भगवान ने उनसे कहा, 'अपने को क्यों नहीं ढूँढते हो— अत्तानं किन्न गवेसेय्याथ !'

संबोधि और धर्मचक्रप्रवर्त्तन के तत्काल बाद की यह घटना अपनी प्रतिकात्मकता से बौद्ध धर्म का मर्म उद्घाटित करती है। वस्तुतः जिन बाह्य विषयों में हम सुख ढूँढते हैं, वे न सिर्फ़ स्वयं लुप्त हो जाते हैं, बल्कि हमारी संचित सम्पदा भी लूट ले जाते हैं। इस स्थिति में प्रत्येक मनुष्य का विवेक उसे अपने आप को खोजने के लिए कभी न कभी प्रेरित करता है। यही स्वस्वरूपा नुसंधा न मूल्यानुसंधान अथवा धर्मानुसंधान में पर्यवसित होता है जिसके साधना की दो दिशाएँ भारतीय परम्परा में उपलब्ध होती हैं। पहली परम्परा, जिसके साधना की दिशा पूर्णता की है, का मूल उत्स आर्ष परम्परा में (वेदों में और जिसका विकास वेदांत में होता है) उपलब्ध होती है, साधना की दूसरी दिशा शून्यता की है जिसे सांख्य, बौद्ध आदि परम्पराओं का मूल कहा जा सकता है।

धर्म की इन मूल उपपत्तियों को समेटे आनंद के कुमारस्वामी की पुस्तक 'हिन्दू धर्म और बौद्ध धर्म' अपने विषय के मर्म को उद्घाटित करती एक महत्त्वपूर्ण किताब है। इस किताब में कुल आठ अध्याय हैं जिनमें परिचय के साथ पाँच अध्याय हिन्दू धर्म के सिद्धांत, आचार-व्यवहार,

प्रतीक कथाओं-मिथकों के विवेचन से सम्बंधित हैं और परिचय के साथ तीन अध्याय बौद्ध धर्म के विवेचन से भी सम्बंधित हैं, अध्याय और उनके विषय पूर्ववत हैं, परिचय भी वैसे ही अध्यायों के पहले स्वतंत्र रूप से दिया गया है, जिसका उद्देश क्रमिक रूप से आगत अग्रिम विषयों की पूर्व पीठिका देना है, केवल बौद्ध धर्म के विवेचन वाले भाग में 'सामाजिक व्यवस्था' नाम का कोई अध्याय नहीं है, जबकि हिन्दू धर्म के विवेचन वाले भाग में यह है।

हिन्दू धर्म से सम्बंधित प्रकरण को भाग एक (1, रोमन) से इंगित किया गया है। इस प्रकरण के आरम्भ में ही , जैसा कि ऊपर बताया गया है, विषय प्रवर्त्तन स्वरूप एक भूमिका सन्निहित है, जिसे 'परिचय' शीर्षक दिया गया है। इस परिचय को भी हमने यहाँ एक अध्याय के रूप में स्वीकार किया है। इस अध्याय में हिन्दू धर्म को एक सनातन प्रवाह, जिसका प्रथम दृश्यमान धारा और रूप वेदों में दीख पड़ता है, के रूप में परिभाषित करते हुए, उसके मूल स्वरों को षड़ दर्शनों में और मुख्यतः गीता में समन्वित देखने की कोशिश की गई है। इस कोशिश की अपूर्वता यह है कि न केवल विषय की दृष्टि से, बल्कि प्रतीक, मिथक, पात्र और अर्थ की दृष्टि से भी इस परम्परा की अक्षुण्णता, सनातनता और गतिशीलता का यहाँ प्रतिपादन है, गीता के संदर्भ में कृष्ण और अर्जुन का वैदिक अग्नि और इंद्र से तादात्म्य स्थापित करना इसी अपूर्वता का अपूर्व उदाहरण है।

दूसरा अध्याय जिसका शीर्षक 'मिथक' है, हिन्दू धर्म के मिथकों, पुराण कथाओं एवं परम्परागत इतिहास के विवेचन एवं उस विवेचन के माध्यम से हिन्दू धर्म के मूल अभिप्रायों को उद्घाटित करने, विश्लेषित करने से सम्बंधित है। लेखक ने बहुत सूक्ष्मता से और कुशलता से मिथक, जिसे वह भारतीय दृष्टि में इतिहास कहता है, को कविजनोचित कल्पना अथवा आविष्कार से दूर तथा उसकी एकांगिकता से उलट सत्य एवं सार्वभौमिक रूप में प्रतिपादित करते हुए यह रेखांकित किया है कि मिथकों में 'एक बार की बात है,' अथवा 'एक समय' के निहितार्थ तात्कालिकता से अभिप्रेत न होकर कालातीत अर्थ-संदर्भ से अभिप्रेत होता है, और इस रूप में ये मिथक धर्म के सामान्य प्रतिरूप और आधार बनकर आते हैं, चाहे वह ईसाई धर्म हो, या बौद्ध धर्म। यहाँ धर्म के वहन-सामग्री अथवा वाहक-आधार के रूप में मिथक का और कालातीत और सार्वभौमिक सत्य के रूप में इतिहा स का प्रतिपादन रोचक है, तथा यह स्मरणीय है कि तथागत बुद्ध के धर्म का संगायन, सम्पादन और संरक्षण भी 'एवं में सुतं—ऐसा मैंने सुना' मिलता है जिसे बौद्ध परम्परा इतिहास के रूप अंगिकृत करती है, और सत्य के रूप में स्वीकार करती है।

तीसरा अध्याय और चौथा अध्याय क्रमशः 'धर्मविज्ञान और आत्मविज्ञान' तथा 'कर्म जीवन का मार्ग' है। इन अध्यायों में हिन्दू धर्म की मूल भित्ति के रूप में वैदिक कर्मानुष्ठान को एवं मूल दर्शन अथवा विचार शक्ति के रूप में अद्वैत का प्रतिपादन है, तथा साथ ही पूर्व अध्याय के विषय का 'अर्थात हिंदू धर्म के प्रतिपादक— वाहक मिथकों' का हिन्दू धर्म के आचारशीलता एवं कर्मानुष्ठान की मूल अभीप्रेरणाओं से एकान्विती स्थापित करते हुए मिथकों के अर्थ को नया रूप और विस्तार तथा हिंदू धर्म के नैतिक, कर्मात्मक पक्ष के विवेचन को आधार दिया गया है। तीसरे

ISSN PRINT 2319 1775 Online 2320 7876
Research Paper © 2012 IJFANS. All Rights Reserved UGC CARE Listed (Group -I) Journal Volume 11, Iss 01, 2022

अध्याय के प्रारम्भ में ही यह निश्संशय कथन एवं प्रतिपादन मिलता है—'We shall not understand the Myth until we have made the Sacrifice, nor the Sacrifice until we have understood the Myth.'

वस्तुतः हिन्दू धर्म के दर्शन और व्यवहार का मूल यह अनुभूति है कि मनुष्य विश्व की अखंडता में विधृत है और विश्व स्वयं ब्रह्म की विसृष्टि और विस्तार है। ब्रह्म—अग्नि और सोम अर्थात् ज्ञान और क्रिया में द्विधा विभक्त होकर विश्व की सृष्टि करता है और वही अग्नि, वायु और आदित्य (देवशक्ति) रूप में इस सृष्टि का नियमन एवं व्यवस्थापन करता है। इस विश्व का आंतर विभाग और गतिशीलता ऋत के सूत्र से व्यवस्थित है तथा ऋत और देवशक्ति के बीच सहज एवं नित्य सम्बंध है। ऋत के प्रतीक यज्ञ में भाग ग्रहण कर मनुष्य एक नित्य देव-कार्य से जड़ता है और अपने अभ्युदय का भागीदा र बनता है। संक्षेप में तीसरे अध्याय और चौथे अध्याय का यही प्रतिपाद्य एवं सार है जो हिन्दू धर्म के मूल सिद्धांत, विचार अथवा दर्शन का आधार है, तथा यह तत्त्व दर्शन उसके आचार अथवा व्यवहार पक्ष को किस प्रकार सुदृढ़ करता है इसका इस अध्याय में सुंदर, और सतर्कित रूप में व्याख्यान है।

हिन्दू धर्म के इस उपर्युक्त दर्शन अथवा विचार में विश्व हेय नहीं है वरन् समस्त जगत् में एक मौलिक एक्य की भावना होते हुए कर्मठ नैतिक जीवन की ओर मनुष्य की प्रेरणा निहित है। यहाँ नैतिक, धार्मिक, सामाजिक कर्तव्य एक व्यापक संस्कार व्यवस्था के अंग हैं, जो कि मनुष्यों के लिए देवानुशासन के अनुसरण और उसके द्वारा आभ्युदिक रायस्पोष के लाभ की साधना योजना है। ऋषियों की प्रार्थना—'सब ओर से भद्र, क्रतु, शुभसंकल्प उनके पास पहुँचे। देवता उन पर प्रसन्न हों।देवताओं का सख्य उन्हें प्राप्त हो। सुख और सम्पदा के बीच उन्हें देवनिर्धारित आयु का भाग मिले। माता-पिता और बंधु के समान देवता मनुष्य के रक्षक, पोषक और पथ-प्रदर्शक हैं। राजसत्ता के समान वे ऋत रूपी क़ानून का रक्षण करते हैं। उसी व्यवस्था का पालन मनुष्य के लिए आदर्श जीवन का देवोपदिष्ट मार्ग है।

हिन्दू धर्म के इस पूर्णतावाद के विचार अथवा दर्शन का वेदों से आरम्भ हो उपनिषद में (वेदांत विषयक साहित्य में) विस्तार होता है। वेद के समान औपनिषदिक दृष्टि में भी ब्रह्म न केवल जगत् के स्रष्टा हैं अपितु उसमें व्याप्त हैं। वह स्वयं विश्व बनते हुए विश्वोत्तीर्ण रहते हैं। ब्रह्म जगत् के मूल कारण तथा उनमें सभी देवता समाहित हैं। वे ब्रह्म मानवीय आत्मा अथवा पुरुष से अभिन्न हैं और इस रूप में ही परम अर्थ अथवा मूल्य बनते हुए धर्म के आदि स्रोत हैं। ऋग्वेद में ऋतचारी के लिए वायु को मधुर कहा गया है, वहाँ ऋतचारी के लिए नदियाँ मधु प्रवाहित करती हैं, रात्रि और उषा, पृथ्वी और अंतरिक्ष, माता और पिता, सूर्य, वनस्पति इत्यादि चराचर जगत् मधुमय है। यही भावना प्रकारा ंतर से उपनिषदों में विवक्षित है—आनंदो ब्रह्मेति व्यजानात्। आनंदाद्धयेव खल्विमानि भूतानि जायन्ते। आनन्देन जातानि जीवंति। आनंद प्रयंत्यभिसंविशन्तीति। तथा

ISSN PRINT 2319 1775 Online 2320 7876
Research Paper © 2012 IJFANS. All Rights Reserved UGC CARE Listed (Group -I) Journal Volume 11, Iss 01, 2022

ब्रह्मैवेदममृतं पुरस्तादब्रह्म पश्चादब्रह्म दक्षिणतश्चोत्तरेण। अधश्चोर्ध्व च प्रसृतं ब्रह्मैवेद विश्वमिदं वरिष्ठम्।।

इस प्रकार हिन्दू धर्म की पूर्णतापरक दर्शन एवं साधना में ऋत के अनुकूल जीवन और कर्म के प्रति आग्रह मिलता है। यह विचार इस पुस्तक के पाँचवे अध्याय 'सामाजिक व्यवस्था' की मूल विषयवस्तु है जिसे लेखक ने नाना उदाहरणों से विवेचित और विश्लेषित करने का सफल प्रयत्न किया है।

वस्तुतः उपनिषद् में यह विचार अथवा दर्शन मिलता है कि 'यह समस्त जगत् उस ईश्वर का आवास्य है, अतः त्यागपूर्वक कर्म करते हुए सौ वर्ष तक जीने की इच्छा करनी चाहिए।' इस विचार में संसार का त्याग अथवा अस्वीकार नहीं है, न कर्मात्मक नैतिक जीवन का। इस प्रकार के दर्शन में यह भाव अथवा इस भाव का तात्त्विक, आध्यात्मिक पक्ष भी सन्निहित है कि त्यागपूर्वक किया गया कर्म मनुष्य से लिप्त नहीं होता वरन् मनुष्य की मुक्ति का मार्ग बनता है। आनंद के कुमारस्वामी ने अपने इस भाग में हिन्दू धर्म के इस पक्ष का सारगर्भित प्रतिपादन किया है।

पुस्तक का दूसरा भाग बौद्ध धर्म के विवेचन से सम्बंधित है। इस भाग के विवेचन का क्रम भी वैसे ही है, जैसे पहले भाग के। भाग को दो (2, रोमन) से अभिहित किया गया है तथा आरम्भ में 'परिचय' नाम से आगे के अध्ययाओं के विषय और उनके विवेचन की पूर्वपीठिका दी गई है। इस 'परिचय' की जो विचारोत्तेजक और साहसिक कथ्य है वह बौद्ध धर्म की विशिष्टता की पहचान एवं उसके रेखांकन के माध्यम से भी धर्म की तत्त्वानुभूति के संदर्भ में उनकी एकात्मता के प्रतिपादन से सम्बंधित है, ख़ासतौर से हिन्दू धर्म और बौद्ध धर्म के संदर्भ में इस बात को विशेष रूप से प्रमाणित किया गया है। यह विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि औपनिवेशिक युग में जब भारतीय धर्म एवं दर्शन के अधिकांश अध्येता और व्याख्याता उन्हें परस्पर सापेक्ष और किंचित् विरोधी रूप में प्रतिपादित कर रहे थे आनंद के कुमारस्वामी ऐसे विलक्षण चिंतक के रूप में हमारे सामने आते हैं जिन्होंने धर्मों की एकात्मता को सप्रमाण विवेचित और विश्लेषित किया। हिन्दू धर्म और बौद्ध धर्म भिन्न नहीं हैं, भिन्नता अध्येताओं की दृष्टि, संस्कार और अभिनिवेशों में है, जो कि पूर्वाग्रहों पर आधारित है। हिन्दू धर्म और बौद्ध धर्म की चेतना तात्त्विक रूप से पृथक नहीं है, अपितु शैली और विवेचन की दृष्टि है। इसीलिए इन धर्मों का अध्ययन जितना ही सतही होगा पार्थक्य उतना ही दृष्टिगोचर होगा, किंतु अध्ययन जितना ही गहरा होगा, दोनों धर्मों में पार्थक्य अथवा भिन्नता को खोजना उतना ही मुश्किल होगा। कुमारस्वामी लिखते हैं, 'To more superficially one studies Buddhism, the more it seems to differ from the Brahmanism in which it originated; the more profound our study, the more difficult it becomes to distinguish Buddhism from Brahminism…'

इस तथ्य एवं सत्य का प्रकाशन न केवल उन दिनों विरल एवं क्रांतिकारी कार्य था, अपितु वह आज भी उतना ही समीचीन और प्रासंगिक है। इस लिहाज़ से प्रस्तुत परिचय न केवल समूर्ण

ISSN PRINT 2319 1775 Online 2320 7876
Research Paper © 2012 IJFANS. All Rights Reserved UGC CARE Listed (Group -I) Journal Volume 11, Iss 01, 2022

पुस्तक का अत्यंत महत्त्वपूर्ण अंश है अपितु वह भारतीय धर्म-विद्या के समस्त व्याख्यानों में महत्त्वपूर्ण स्थान ग्रहण करने का अधिकारी है। कुमारस्वामी अपनी बात को पुष्ट करने के लिए आगे लिखते हैं- 'No true philosopher evar came to destroy, but only to fulfil the law. "I have seen," the Buddha says, "the ancient Way, the Old Road that was taken by formerly All-awakened, and that is the path I follow…' इस भारतीय धर्म के सनातन प्रवाह के अविच्छिन्नता और अखंडता की पुष्टि के लिए वह इस बौद्ध संदर्भ के बाद तुरंत बाद भगवान बुद्ध के एक और वचन को उद्धृत करके ब्राह्मण परम्परा से सदृश प्रमाणों के उल्लेख से अपनी बात को पुष्ट और व्याख्यायित करते हैं, वे लिखते हैं, 'and since he elsewhere praises the Brahmans of old who rememberd the Ancient Way that leads to Brahma, there can be no doubt that the Buddha is alluding to "the ancient narrow path that stretches far away, where the contemplatives, knowers of Brahma, ascend, set free" (vimuktah), mentioned in verses that were already old when Yajnavalkya cites them in the earliest Upnishad.'

इस भाग का दूसरा अध्याय पूर्व भाग के समान ही 'मिथक' है जिसके आरम्भ में ही कुमारस्वामी लिखते हैं, 'In asking, What is Buddhism, we must begin, as before, with the Myth.' मिथक के रूप में और बुद्ध उपदेश एवं बौद्ध धर्म के विवेचन एवं ऐतिहासिक तात्त्विक निरूपण के लिए लेखक ने इस अध्याय में सर्वप्रथम एवं सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण अंश के रूप में बुद्ध जीवनी को लिया है। आनंद कुमारस्वामी की दृष्टि और लेखन की यह विशेषता है कि वह तथ्य और विषय को वही नहीं रहने देते, जैसे कि वे प्रदत्त होते हैं अपितु व्यापक सत्य के साथ एवं परम्परानुसारि दृष्टि विशेष अथवा प्रज्ञा के सहचार और संवाद के द्वारा उसे नया अर्थ देते हैं, जिसमें पुरानी दृष्टि का समावेश भी होता है एवं नए युग की आवश्यकता एवं माँगों का भी। इस अध्याय में बुद्ध की जीवनी, उनकी जीवनी से जुड़े ऐतिहासिक तथ्य एवं मिथक इस विलक्षण दृष्टि के साथ विवेचित और व्याख्यायित हुए हैं। आनंद कुमार स्वामी मिथक को वैसे नहीं देखते जैसे एक इतिहासकार देखता है, अपितु वे मिथकों में रहस्यात्मक धर्म का, प्रतीकात्मक रूप से अभिव्यंजित सत्य का संधान करते हैं। स्मरणीय है कि बुद्ध की जीवनी, तथागत अथवा शास्ता के आत्मवृत्तांत रूप में धर्म और आचार का सर्वश्रेष्ठ प्रमाण होते हुए भी पालि साहित्य में कहीं क्रमिक एवं विस्तृत रूप में प्राप्त नहीं होती। 'महावग्ग' का आरम्भिक वर्णन हो, अथवा 'महापरिनिर्वाण' सुत्त का क्रमिक वर्णन, ऐसे स्थल भी पालि साहित्य में विरल ही हैं। परवर्ती जातक कथाओं में भिन्न दृष्टि से बोधिसत्त्व की जीवनी ही अभिप्रेत है, तथा निदानकथा और उसकी अट्ठकथा में विवक्षित बुद्ध की जीवनी में इतिहास और मिथक, तथ्य और कल्पना ऐसे घुल-मिल गए हैं, कि किसी भी अर्वाचीन बुद्ध जीवनीकार को एक प्रामाणिक जीवनी तैयार करने में मसक्कत करनी पड़ती है, तब और जब जीवनीकार पश्चिमी बुद्धि और मनीषा में दीक्षित एवं वैज्ञानिक दृष्टि और प्रविधि सम्पन्न हो, किंतु

आनंद कुमारस्वामी जैसे चिंतक और लेखक को ऐसी कठिनाई का सामना नहीं करना पड़ता। आनंद कुमारस्वामी मिथक में सत्य को प्रतिवेध करने में न केवल सिद्ध हैं अपितु वे उसके पूर्वापर सम्बंध की व्याख्या द्वारा न केवल एक धर्म के रहस्य का उद्घाटन करते हैं अपितु इसके माध्यम से समस्त सत्य धर्मों की मौलिक एकता का प्रकाशन करते हैं, जैसा कि ऊपर बताया गया है कि यह एकता तत्त्व की दृष्टि से तो वे करते ही हैं, वे मिथकों और उनकी शैलियों के विषय में भी ऐसी ही अचूक सादृश्यता का प्रतिपादन करते हैं, और इसके माध्यम से प्रस्तुत विषय के मर्म को उद्घाटित करते चलते हैं। यहाँ इस संदर्भ में अनेक उदाहरणों में से प्रस्तुत अध्याय से केवल एक उदाहरण देना पर्याप्त होगा। पालि साहित्य के आधार पर बुद्ध जीवनी को प्रस्तुत करते हुए आनंद कुमारस्वामी यह बताते और इस पर बल देना नहीं भूलते, जैसा कि बौद्धों के प्राचीन साहित्य में उक्त है कि 'बुद्ध का जन्म औपपादुक था, जरायुज नहीं।' और इस कथन को पश्चिमी परम्परा में महापुरुषों के जन्म के सम्बंध में उक्त कथनों और कथाओं से जोड़ते और पुष्ट करते चलते हैं। इस अध्याय में विभिन्न स्रोतों के आधार पर बुद्ध की प्रामाणिक जीवनी और उस जीवनी के माध्यम से बौद्ध धर्म के लक्ष्य और साधन, दर्शन और आचार पक्ष को प्रस्तुत करने की कोशिश की गई है, जिसमें आनंद कुमार स्वामी को पूरी सफलता मिली है।

तीसरा अध्याय जो कि इस भाग का और पुस्तक का भी अंतिम अध्याय है 'सिद्धांत अथवा सदुपदेश' नाम से है। इस अध्याय में बौद्ध धर्म के प्रमुख सिद्धांतों, यथा- अनात्मवाद, प्रतीत्यसमुत्पाद, निर्वाण, बोधिपाक्षिक धर्म, साधना पथ का दर्शन अर्थात् दान, शील, ध्यान आदि का मूल अवधारणा और विचार तत्त्व का परम्परा संहति व्याख्या अथवा प्रतिपादन है। इन विषयों के प्रतिपादन में सामग्री मूल स्रोतों से ली गई है, किंतु उसकी व्याख्या में अपनी सूक्ष्म और सुस्पष्ट दृष्टि को विनियोजि त कर विषय को बुद्ध के वास्तविक उपदेश और उनके उपदेश की कसौटी माध्यम मार्ग के अनुरूप प्रतिपादित किया गया है, जो कि इस अध्याय की और इस पुस्तक की अनूठी विशेषता कही जा सकती है। इस संदर्भ में एक उदाहरण देना पर्याप्त है। बुद्ध उपदेश और बौद्ध धर्म के अध्येता प्रायः यह मानते हैं कि भगवान बुद्ध अनात्मवादी थे। वे व्यक्ति अथवा पुरुष-पुदगल में पाँच स्कंधों की अवस्थिति और संघात के अतिरिक्त किसी स्थिर, ध्रुव और शाश्वत तत्त्व अथवा आत्मा की सत्ता स्वीकार नहीं करते थे। किंतु आनंद कुमारस्वामी यह प्रतिपादित करते हैं कि ऐसी मान्यता सही नहीं है। बुद्ध ने कभी आत्मतत्त्व अथवा आत्मा का अस्वीकार नहीं किया, उन्होंने संसार में अनात्मभूत तत्त्वों में अनात्म दर्शन की शिक्षा दी, उन्होंने 'मैं' भाव की मायिकता का निषेध किया, न कि सर्वथा आत्मा का ही। आनंद कुमारस्वामी अपने इस सिद्धांत के पक्ष में अनेक प्रमाण देते हैं। वे प्रमाण न केवल पालि निकाय से हैं, अपितु उनमें नाना संदर्भ समाहित हैं जो शोध के स्वतंत्र विषय हो सकते हैं।

इस प्रकार आनंद के कुमारस्वामी प्रणीत 'हिन्दू धर्म और बौद्ध धर्म' पुस्तक अपने विषय का यथार्थ प्रतिपादन करने वाली एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण पुस्तक है। पुस्तक नातिदीर्घ होते हुए भी हिन्दू

ISSN PRINT 2319 1775 Online 2320 7876
Research Paper © 2012 IJFANS. All Rights Reserved UGC CARE Listed (Group -I) Journal Volume 11, Iss 01, 2022

धर्म और बौद्ध धर्म के सभी आधारभूत और महत्त्वपूर्ण पक्षों का सारगर्भित विवेचन करती है तथा धर्मों एवं तत्त्वों की एकात्मता प्रतिपादित करते हुए हिन्दू धर्म और बौद्ध धर्म को एक ही अविच्छिन्न, अखंड परम्परा में देखने का प्रस्ताव करती है।